अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी (Space Technology)

रॉकेट/प्रक्षेपणयान (Rocket/Launching Vehicle)

किसी भी अंतरिक्षयान अथवा कृत्रिम उपग्रह को किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति हेतु जब उसकी निर्धारित कक्षा में स्थापित किया जाता है, तो इस हेतु जिस वाहन की आवश्यकता पड़ती है, उसे ही रॉकेट/प्रक्षेपण यान कहते हैं। दरअसल, कृत्रिम उपग्रह के प्रक्षेपण हेतु जिन दो घटकों की जरुरत होती है। उनमें रॉकेट के अलावा उपग्रह के संचालन हेतु डाले गये साजो-सामान (Logistics) के कुल भार को नीत-भार (Pay-load) कहते हैं।

रॉकेट में ईंधन एवं ऑक्सीकारक के मिश्रण को प्रणोदक (Propellant) कहते हैं। रॉकेट के संचालन हेतु ईंधन के तौर पर ठोस एवं द्रव प्रणोदकों का प्रयोग होता है, जैसे-HTPB (Hydroxy Terminated Poly Butadiene) जो कि एक ठोस प्रणोदक है एवं UDMH: Unsymmerical Di-Methyl Hydrazene जो कि एक द्रव प्रणोदक है। इसी प्रकार, इन रॉकेटों में ऑक्सीजन की आपूर्ति हेतु कुछ ऑक्सीकारकों का प्रयोग भी अपेक्षित है, जैसे कि अमोनियम परक्लोरेट, नाइट्रोजन टेट्रॉक्साइड आदि।

ठोस प्रणोदकों का प्रयोग जहाँ काफी सरल एवं अपेक्षाकृत सस्ता पड़ता है, वहीं इसका नियंत्रण कुछ मुश्किल होता है। वहीं दूसरी ओर, हालांकि द्रव प्रणोदकों का प्रयोग काफी जटिल एवं अपेक्षाकृत महंगा होता है, परंतु इस पर नियंत्रण स्थापित कर पाना आसान होता है। लेकिन जहाँ तक इनकी कार्यक्षमता का प्रश्न है, तो यह ठोस प्रणोदकों की अपेक्षा काफी अधिक पायी गयी है। ऐसे में, यह कोशिश की जाती है कि उपग्रहों के निर्माण में व्यय एवं कार्यक्षमता के बीच एक समन्वय स्थापित किया जाये, ताकि इसे व्यावसायिक स्वरूप प्रदान किया जा सके।

ईंधनों की कार्यक्षमता को एक विशिष्ट तथ्य के आधार पर मापा जाता है, जिसे 'विशिष्ट संघात' (Specific Impulse) कहते हैं। दरअसल, एक पाउंड (लगभग 450 ग्राम) ईंधन को जलाने पर जो प्रणोद उत्पन्न होता है, उसे ही विशिष्ट संघात कहते हैं। उदाहरणार्थ, ठोस प्रणोदक हेतु यह मान 260 सेकंड (विशिष्ट संघात की इकाई 'सेकंड' होती है) है, तो द्रव प्रणोदक की 340 सेकंड। स्पष्ट है कि किसी प्रणोदक के लिए यह मान जितना ही अधिक होता है, उसकी कार्यक्षमता भी उतनी ही अधिक होती है।

रॉकेट का प्रक्षेपण न्यूटन के तृतीय नियम पर आधारित है, जो कि क्रिया एवं प्रतिक्रिया के सिद्धांत एवं संवेग संरक्षण के सिद्धांत पर आधारित है। किसी भी वस्तु के द्रव्यमान एवं वेग का गुणनफल ही उसका संवेग (Momentum) कहलाता है, अर्थात संवेग = द्रव्यमान × वेग (P=mv)।

ध्रुवीय कक्षा एवं उपग्रह (Polar Orbit & Satellites)

जब कोई उपग्रह ध्रुवों के ऊपर से होकर पृथ्वी के चारो ओर परिभ्रमण करता है, तो इस तरह के पथ को ही ध्रुवीय कक्षा (Polar Orbit) कहते हैं। ऐसे उपग्रह का आनत कोण ध्रुवों की अपेक्षा लगभग 20-30 डिग्री होता है और ये पृथ्वी की सतह से लगभग 200-1000 km की ऊंचाई पर स्थित हो सकते हैं। विषुवत रेखा के सापेक्ष इस तरह के उपग्रह लगभग 90 डिग्री के आनत (Inclination) पर स्थित होते हैं। ऐसे उपग्रह पृथ्वी की निम्न कक्षा (LEO) में स्थित माने जाते हैं और जब ये पृथ्वी की सतह से लगभग 500 कि.मी. की ऊंचाई पर स्थित होते हैं, तो इनकी गति 7.5 कि.मी./सेकंड की होती है।

ऐसे उपग्रह पृथ्वी के ध्रुवों से होकर उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर परिभ्रमण करते हैं, जबकि पृथ्वी अपने अक्ष पर पश्चिम से पूर्व की ओर भ्रमण करती है। इनका परिभ्रमण काल वस्तुतः इनकी अवस्थिति अथवा ऊंचाई पर निर्भर करती है; जैसे-जैसे ऊंचाई बढ़ती जाती है, इनका परिभ्रमण काल भी बढ़ता जाता है।

जब कभी किसी पिंड/वस्तु का पलायन वेग 8कि.मी./से. होता है, तो यह पिंड पृथ्वी पर वापस आने के बजाय एक निश्चित करता (ध्रुवीय कक्षा) में स्थापित हो जाता है, जो कि वृत्ताकार/लगभग वृत्ताकार होती है। इस पिंड (उपग्रह) की जड़त्वीय गति (Intertial Motion) जहाँ इसे आगे की ओर ले जाती है, वहीं गुरुत्वीय बल के कारण यह नीचे की ओर आना चाहता है। इस प्रकार, उपग्रह पर दो बल कार्यशील होते हैं और इनका परिणामी बल ही इसे सतत ध्रुवीय कक्षा में बनाये रखने का कार्य करता है।

किसी भी उपग्रह को ध्रुवीय कक्षा में स्थापित करने हेतु कहीं अधिक वैज्ञानिक सूझ-बूझ एवं नियंत्रण की आवश्यकता होती है; चूंकि भू-स्थिर कक्षा (Geo-stationary Orbit) में स्थापित उपग्रह पर सिर्फ एक बल ही लग रहा होता है (जड़त्वीय बल), अतः इस पर नियंत्रण स्थापित करना अपेक्षाकृत आसान होता है।

प्रक्षेपित उपग्रह की कक्षा क्या होगी, यह दरअसल उस उपग्रह के उद्देश्य में निहित होती है- ऐसे उपग्रह जो कि ध्रुवीय कक्षा में स्थापित होते हैं, का उपयोग सामान्यतया दूरस्थ संवेदन कार्यों हेतु किया जाता है। ध्रुवीय उपग्रह पृथ्वी के किसी स्थान को एक दिन में एकाधिक बार पार करने में समर्थ होता है। एक परिभ्रमण में यह पृथ्वी के एक खास हिस्से का ही चित्र/आंकड़ा ले पाता है; इसी क्रम में यह पृथ्वी के प्रायः संपूर्ण हिस्से का चित्र/आंकड़ा प्राप्त करने में समर्थ होता है।

ध्रुवीय उपग्रहों का उपयोग पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों की पहचान एवं खोज; दीर्घावधिक मौसम संबंधी भविष्यवाणी; बादलों, वायुमंडलीय आंकड़ों, आर्द्रता, ओजोन परत, वायु एवं वर्षा की प्रकृति; आदि को जानने हेतु संभव है। ये आंकड़े दूरस्थ संवेदन, मौसम विज्ञान तथा पर्यावरणीय अध्ययनों हेतु काफी उपयोगी साबित होते हैं।

इनकी सीमितता यह है कि पृथ्वी की किसी एक खास अवस्थिति का अवलोकन इनके द्वारा सतत करना संभव नहीं हो पाता।

- **दूरस्थ संवेदी उपग्रह (Remote Sensing Satellites):**

ऐसे उपग्रहों को सूर्य तुल्यकालिक कक्षा (Sun-synchronous Orbit) में रखा जाता है, जो कि पृथ्वी की सतह से लगभग 700-900 किमी. की ऊंचाई पर स्थित होती है। ऐसे उपग्रह विषुवत रेखा के साथ 95-105 डिग्री के आनत कोण का निर्धारण करते हैं। सूर्य-तुल्यकालिक कक्षा पृथ्वी के विषुवत रेखीय झुकाव के चलते संभव बन पाती है, जो कि उपग्रह के तल को इस रूप में बनाये रखता है कि यह सूर्य एवं पृथ्वी के बीच के कोण को वर्ष भर एकसमान बनाये रख सके (लगभग 1 डिग्री)। ऐसी कक्षा में स्थित उपग्रह को यदि सूर्य से देखा जाये, तो इसकी गति हमेशा समरूप ही दिखायी पड़ेगी। दूसरे शब्दों में, सूर्य-तुल्यकालिक कक्षा में उपग्रहीय कक्षीय तल एवं सूर्य की दिशा के बीच का कोण स्थिर ही होता है। इसके चलते पृथ्वी के किसी भाग पर सौर-प्रकाश की मात्रा एवं सौर-दशाएं वर्षभर एकसमान ही बनी रहती हैं, जिससे आंकड़ों/चित्रों का सुस्पष्ट लिया जाना संभव हो पाता है। यही कारण है कि ऐसे उपग्रहों का उपयोग सामान्यतया मौसम संबंधी जानकारियों में किया जाता है। साथ ही, ये पर्यावरणीय एवं वातावरणीय घटकों की स्थिति जानने में भी प्रयुक्त होते हैं।

- **भू-तुल्यकालिक कक्षा एवं उपग्रह (Geo-stationary Orbit and Satellites):**

यदि कोई उपग्रह 3,075 मीटर/सेकंड की गति से पृथ्वी की सतह से लगभग 36,000 किमी. की ऊंचाई पर पृथ्वी का परिभ्रमण करता है, तो यह पृथ्वी की घूर्णन गति (= 450 मीटर/सेकंड) के तुल्यकालिक हो जाता है। यदि उपग्रह पृथ्वी की घूर्णन की दिशा अर्थात् पश्चिम से पूर्व की ओर परिभ्रमण करता है और यदि उपग्रहीय तल पृथ्वी के विषुवतीय तल से मेल खाता है, तो पृथ्वी पर स्थित किसी अन्वेषक को यह स्थिर ही जान पड़ेगा। चूंकि इस उपग्रह की गति पृथ्वी की घूर्णन गति के तुल्यकालिक है, अतः इसे **भू-तुल्यकालिक उपग्रह** (Geo-synchronous Satellite) कहते हैं, और ऐसी कक्षा को **भू-तुल्यकालिक कक्षा** (Geo-synchronous Orbit) कहते हैं। यह कक्षा **विषुवतरेखीय कक्षा** (Equatorial Orbit) भी कहलाती है। ऐसी कक्षा में स्थित उपग्रह के कक्षीय तल एवं विषुवतरेखीय तल के बीच का कोण सामान्यतः 19.3 डिग्री होता है। ऐसे उपग्रह का परिभ्रमण काल 24 घंटे का होता है, जो कि पृथ्वी के घूर्णन काल के तुल्य है।

दरअसल, भू-तुल्यकालिक कक्षा में स्थित उपग्रह की कक्षा दीर्घवृत्तीय (Elliptical) होती है। ऐसी स्थिति में जब उपग्रह पृथ्वी से निम्नतम दूरी पर होता है, तो इसे उप-भू (Perigee) कहते हैं, जो कि लगभग 250 किमी. होती है। दूसरी ओर, जब उपग्रह, पृथ्वी से सर्वाधिक दूरी पर स्थिति होता है, तो इस **अप-भू** (Apogee) कहते हैं, जो कि लगभग 36 हजार किमी. की ऊंचाई पर स्थित होती है। INSAT- श्रेणी के उपग्रहों को इसी तरह की कक्षा में स्थापित किया जाता है, जिनका मुख्य उपयोग संचार सुविधाओं की स्थापना में किया जाता है।

भू-तुल्यकालिक उपग्रह की गति का विश्लेषण न्यूटन के **व्युत्क्रम वर्ग के नियम** (Law of Inverse Square) के माध्यम से किया जा सकता है इसके अनुसार, जब उपग्रह **उप-भू** (Perigee) की स्थिति में होता है, तो इसकी गति **सर्वाधिक** और जब **अप-भू** (Apogee) की स्थिति में होता है तो यह **सबसे कम** होती है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि जैसे-जैसे उपग्रह उप-भू से अप-भू की ओर जाता है, उसकी गति में क्रमशः कमी आती जाती है, अथवा अप-भू से उप-भू की ओर बढ़ने पर इसकी गति क्रमशः बढ़ती जाती है।

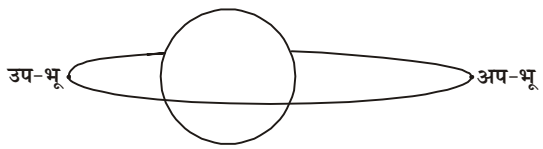

इन भू-तुल्यकालिक उपग्रहों का वास्तविक उपयोग संचार माध्यमों की स्थापना एवं इनकी गुणवत्ता में वृद्धि लाने हेतु ही किया जाता है। साथ ही, अल्पावधिक मौसम संबंधी जानकारियों/भविष्यवाणियों में भी ये काफी प्रभावकारी साबित हुए हैं। दरअसल, ये ऐसे उपग्रह होते हैं, जो कि वाहित तरंगों को पृथ्वी की ओर परावर्तित कर सकने में समर्थ होते हैं। यही कारण है कि इन्हें **संचार उपग्रह** (Communication Satellite) भी कहते हैं। ऐसे उपग्रह जितना ही वजनी एवं बड़े होते हैं, इनके द्वारा प्रेषित तरंगों की मात्रा भी उतनी ही ज्यादा होती है। अत: संचार उपग्रहों का भार काफी मायने रखता है। यही कारण है कि पीएसएलवी के माध्यम से कम भार वाले भू-तुल्यकालिक उपग्रहों का प्रक्षेपण अधिक प्रभावकारी नहीं माना जाता। ऐसे में, क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन युक्त जीएसएलवी के माध्यम से वृहद आकार एवं भार वाले उपग्रहों का प्रक्षेपण गुणवत्ता एवं प्रभाव दोनों दृष्टियों से अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है।

भू-तुल्यकालिक कक्षा अथवा स्थानांतरित कक्षा (उप-भू = 250 किमी., अप-भू = 36,000 किमी.) में स्थापित उपग्रह को जब **भू-स्थिर कक्षा** (Geo-stationary Orbit) में स्थापित किया जाता है तो यह उपग्रह एक **वृत्तीय कक्षा** (Circular Orbit) का अनुसरण करने लगता है, जिससे पृथ्वी के प्रत्यक बिंदु से इसकी दूरी एकसमान ही बनी रहती है। ऐसी स्थिति में यह उपग्रह विषुवतरेखा के साथ शून्य डिग्री का कोण बनाता है। ऐसा करना इसलिए आवश्यक होता है, ताकि इनके द्वारा प्रेषित वाहित तरंगों को पृथ्वी के सम्पूर्ण भागों तक एकरूपता के साथ वितरित किया जा सके।

इस प्रकार, भू-तुल्यकालिक कक्षा में स्थापित उपग्रहों तथा भू-स्थिर कक्षा में स्थापित उपग्रहों के बीच के अंतर को स्पष्ट किया जा सकता है।

- **<u>प्रक्षेपण यान प्रौद्योगिकी (Launching Vehicle Technology)</u>:**

किसी भी तरह के उपग्रह को उसकी निर्धारित कक्षा में स्थापित करने हेतु जिस यान का प्रयोग किया जाता है, उसे ही **प्रक्षेपण यान** (Launching Vehicle) कहते हैं। यह प्रौद्योगिकी चतुर्स्तरीय मानी जा सकती है, जिनमें से प्रथम दो स्तर अब उपयोगी नहीं रह गये हैं।

1. **SLVs (Satellite Launching Vehicles- उपग्रह प्रक्षेपण यान):**
   - यह एक चार-स्तरीय रॉकेट प्रणाली है।
   - इसमें ठोस प्रणोदक का प्रयोग होता है।
   - इसका नीत-भार (Pay-load) 50 किग्रा. है।
   - इसके माध्यम से वर्ष 1990 में ISRO ने रोहिणी नामक उपग्रह को पृथ्वी की निम्न कक्षा अर्थात् 450 किमी. की ऊँचाई पर स्थापित किया था।
2. **ASLVs (Augmented Satellite Launching Vehicles- संवर्द्धित उपग्रह प्रक्षेपण यान):**
   - यह एक पांच-स्तरीय रॉकेट प्रणाली है।
   - इसमें भी सिर्फ ठोस प्रणोदक का ही प्रयोग किया जाता है।
   - यह वस्तुत: SLV का संवर्द्धित स्वरूप है।
   - इसका नीत-भार (Pay-load) 150 किग्रा. है।
   - यह उपग्रह को पृथ्वी की सतह से लगभग 900 किमी. की ऊंचाई पर स्थापित करने में समर्थ है।
3. **PSLVs (Polar Satellite Launching Vehicles- ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान):**
   - यह चार-स्तरीय रॉकेट प्रणाली है।
   - इसके प्रथम स्तर में ठोस प्रणोदक के तौर पर HTPB (Hydroxy-Terminated Poly-Butadiene) होता है, जबकि ऑक्सीकारक के रूप में अमोनियम परक्लोरेट होता है।
   - इसका दूसरा स्तर द्रव प्रणोदक आधारित होता है, जिसमें UDMH (Unsymmetrical Di-Methyl Hydrazene) का प्रयोग प्रणोदक के तौर पर तथा नाइट्रोजन टेट्रॉक्साइड का प्रयोग ऑक्सीकारक के तौर पर होता है।
   - इसका तीसरा चरण बिल्कुल वैसा ही होता है, जैसा कि प्रथम चरण है।
   - इसके चौथे चरण में ईंधन के तौर पर MMH (Monomethyl Hydrazene) तथा ऑक्सीकारक के तौर पर नाइट्रोजन टेट्रॉक्साइड का प्रयोग किया जाता है।
   - PSLV के माध्यम से 1600 किग्रा. भार वाले उपग्रह को पृथ्वी की सतह से 620 किमी. की ऊंचाई पर सूर्य-तुल्यकालिक कक्षा में स्थापित किया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर, इसके माध्यम से 1050 किग्रा. भार वाले उपग्रह को पृथ्वी की भू-स्थिर कक्षा (36,000 किमी.) में भी स्थापित किया जा सकता है।

4. GSLVs (Geostationary Launching Vehicles- भू-स्थिर प्रक्षेपण):

- यह एक त्रि-स्तरीय रॉकेट प्रणाली है।
- यह 5000 किग्रा. तक के उपग्रह को पृवी की भू-स्थिर कक्षा में स्थापित करने में समर्थ है।
- इसका प्रथम चरण बिल्कुल वैसा ही होता है, जैसा कि PSLV का प्रथम चरण होता है। अर्थात् इसमें प्रवेस प्रणादेक के तौर पर HTPB का प्रयोग होता है, जबकि अमोनियम परक्लोरेट ऑक्सीकारक के रूप में प्रयुक्त होता है।
- इसका द्वितीय चरण बिल्कुल वैसा ही होता है, जैसा कि PSLV का द्वितीय चरण होता है। अर्थात् इसमें द्रव प्रणादेक के तौर पर UDMH का प्रयोग होता है, तो ऑक्सीकारक के तौर पर नाइट्रोजन टेट्रॉक्साइड का।
- इसका तृतीय चरण सर्वधिक महत्वपूर्ण एवं जटिल होता है, जिसमें क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन का प्रयोग उपेक्षित है। इस विशिष्ट रॉकेट इंजन में ईंधन के तौर पर द्रवित हाइड्रोजन (–253ºC पर) तथा ऑक्सीकारक के तौर पर द्रवित ऑक्सीजन (–253ºC पर) का प्रयोग किया जाता हैं ऐसे इंजन क्रायोजेनिक प्रौद्योगिकी पर आधारित होते हैं और ये सर्वाधिक कार्यक्षम रॉकेट प्रणाली होते हैं। इस तरह की प्रणाली सिर्फ छह देशों को ही हासिल हो सकी है- संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, रूस, फ्रांस, जापान एवं भारत।

भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम (India's Space Programme)

अंतरिक्ष अनुसंधान तथा उपग्रह प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत ने वर्ष 1975 में आर्यभट्ट नामक उपग्रह के सफल प्रक्षेपण से प्रवेश किया। 1962 में ही भारत सरकार ने परमाणु ऊर्जा विभाग के अंतर्गत भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति बनायी। 1963 में त्रिवेन्द्रम के निकट थुम्बा नामक स्थान पर रॉकेट प्रेषण सुविधा केंद्र (Sounding Rocket Launching Facility) की स्थापना की गयी। 1969 में बंगलौर में **भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO)** के गठन के पश्चात् इस दिशा में क्रांति सी आ गयी। भारत सरकार ने अंतरिक्ष विभाग के सहयोग से जून 1972 में एक अंतरिक्ष आयोग की स्थापना की और इसके साथ ही अंतरिक्ष कार्यक्रमों की औपचारिक शुरुआत हो गयी। अंतरिक्ष आयोग अंतरिक्ष विभाग के अधीन उसके अनुसंधान तथा विकास संगठन के रूप में कार्य करता है, जबकि अंतरिक्ष कार्यक्रम चलाने का संपूर्ण उत्तरदायित्व अंतरिक्ष विभाग का है।

विकासशील अर्थव्यवस्था और उससे जुड़ी समस्याओं से घिरे होने के बावजूद भारत ने अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी को प्रभावी ढंग से विकसित किया है, उसे अपने तीव्र विकास के लिए इस्तेमाल भी किया है तथा विश्व के अन्य देशों को विभिन्न अंतरिक्ष सेवाएं उपलब्ध करा रहा है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के इतिहास में 70 का दशक प्रयोगात्मक युग था, जिस दौरान आर्यभट्ट, भास्कर, रोहिणी तथा एप्पल जैसे प्रयोगात्मक उपग्रह कार्यक्रम चलाए गए। इन कार्यक्रमों की सफलता के बाद 80 का दशक संचालनात्मक युग बना, जब इनसैट तथा आईआरएस जैसे उपग्रह कार्यक्रम शुरू हुए। आज इनसैट तथा आईआरएस इसरो के प्रमुख कार्यक्रम हैं।

अंतरिक्ष यान के स्वदेश में ही प्रक्षेपण के लिए भारत का मजबूत प्रक्षेपण यान कार्यक्रम है। यह अब इतना परिपक्व हो गया है कि प्रक्षेपण की सेवाएं भारत अन्य देशों को भी उपलब्ध कराता है। इसरो की व्यावसायिक शाखा **एंट्रिक्स** (ANTRIX), भारतीय अंतरिक्ष सेवाओं का विपणन विश्व भर में करती है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम की खास विशेषता अंतरिक्ष में जाने वाले अन्य देशों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और विकासशील देशों के साथ प्रभावी सहयोग है।

उद्देश्य:

उपग्रह प्रक्षेपण के पीछे मूलत: दो ही उद्देश्य होते हैं। प्रथम, दूर संवेदन का विकास करना तथा दूसरा, संचार व्यवस्था को जनसामान्य के लिए सुलभ बनाना। भारतीय अंतिरक्ष कार्यक्रम का मूल उद्देश्य संचार, मौसम संसाधनों के सर्वेक्षेण तथा प्रबंधन के क्षेत्र में अंतरिक्ष कार्यक्रम पर आधारित सेवाएं उपलब्ध कराना, अंतरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को भू-उपग्रहों के माध्यम से जनसंचार एवं शिक्षा के क्षेत्रों में प्रयुक्त कराना तथा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपग्रहों, प्रक्षेपण यानों तथा सम्बद्ध आधारभूत प्रणालियों का विकास करना होता है। अंतरिक्ष संचार ने देश में न केवल संचार क्षमता का सृजन किया है, बल्कि पहले से चेतावनी देने, खोज एवं राहत कार्यों तथा सुदूर क्षेत्रों में दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। अंतरिक्ष दूर संवेदन से कृषि, मिट्टी, वानिकी, भूमि, जल संसाधन, पर्यावरण, समुद्री विकास तथा सूखा एवं बाढ़ आपदा प्रबंधन के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त होती हैं। इस तरह से यह कार्यक्रम राष्ट्रीय विकास के प्राय: हर पहलू को समेटे हुए है।

भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली (INSAT):

भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली एक बहुद्देशीय तथा बहुप्रयोजनीय उपग्रह प्रणाली है। इसका उपयोग घरेलू दूरसंचार, मौसम की जानकारी, आंकड़ों के संप्रेषण तथा आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के सीधे राष्ट्रव्यापी प्रसारण में किया जाता है। यह अंतरिक्ष

विभाग, दूरसंचार विभाग, भारतीय मौसम विभाग, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का संयुक्त उद्यम है। इनसैट प्रणाली की व्यवस्था तथा संचालन की संपूर्ण जिम्मेदारी अंतरिक्ष विभाग की है।

एशिया-प्रशांत इलाके में भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह (इनसैट) प्रणाली सबसे बड़ी घरेलू संचार उपग्रह प्रणालियों में से एक है। 1980 के दशक में इसने भारत के संचार क्षेत्र में बड़ी क्रांति की शुरुआत की, जिसे बाद में जारी रखा गया। यह प्रणाली सी-बैंड, वृहद सी-बैंड और कू-बैंड में कुल मिलाकर 175 ट्रांसपोंडर्स उपलब्ध कराती है। बहुउद्देशीय उपग्रह प्रणाली होने के कारण यह दूरसंचार, टेलीविजन प्रसारण, मौसम पूर्वानुमान, आपदा चेतावनी और बचाव क्षेत्रों में सेवाएं उपलब्ध कराती है। इनसैट प्रणाली भारतीय अर्थव्यवस्था के अनेक महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सेवाएं उपलब्ध कराती है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण दूरसंचार क्षेत्र है, जो इनसैट मोबाइल उपग्रह सेवा के साथ-साथ वी-सैट सेवाएं भी देता है। आज लगभग 25,000 से भी ज्यादा अत्यधिक लघु एपर्चर टर्मिनल (वी-सैट) काम कर रहे हैं।

इनसैट के कारण ही भारत में 1500 से भी ज्यादा स्थलीय पुनर्प्रसारण ट्रांसमीटरों से 1 अरब से अधिक लोगों तक टी. वी. की पहुंच हो पाई है । इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण और विकासात्मक शिक्षा के लिए विशेष चैनल उपलब्ध करा पाना संभव हो पाया है। साथ ही, दूर-दराज क्षेत्र व ग्रामीण लोगों को टेलिमेडिसिन नेटवर्क के जरिए विशेषज्ञ चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध करा पाना संभव हो पाया है। भारत का पहला विषय-आधारित उपग्रह एडुसेट, जो विशेष रूप से शिक्षण सेवाओं के लिए है, के प्रक्षेपण से इनसैट प्रणाली द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली शिक्षण सेवाओं को और बढ़ावा मिला है। इनसैट प्रणाली अपने कुछ अंतरिक्ष यानों में स्थापित वेरी हाई रेजोल्यूशन रेडियोमीटरों तथा सीसीडी कैमरों के माध्यम से मौसम संबंधी सेवाएं भी मुहैया कराती है। इसे मौसम संबंधी चित्रों तथा आपदा-चेतावनी रिसीवरों के माध्यम से आने वाले तूफानों की चेतावनी देने के लिए उपयोग किया जाता है। इस उद्देश्य हेतु भारत के पूर्वी और पश्चिमी समुद्री तटों पर 350 रिसीवर लगाए गए हैं।

इनसैट प्रणाली के प्रयोग से देश के पूर्वोत्तर राज्यों में ग्रामीण तार व्यवस्था तथा जिलों एवं राज्यों में राष्ट्रव्यापी आंकड़ा तथा संचार संपर्क उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्रों की स्थापना की गयी है। इनसैट उपग्रह में लगे अति उच्च रेडियोमीटर (VHRR) उपकरणों की सहायता से मौसम संबंधी आंकड़ों को एकत्र करने तथा उन्हें प्रसारित करने के साथ-साथ असंलग्न प्लेटफॉर्म से सुदूर क्षेत्रों के मौसम संबंधी आंकड़े इकट्ठा करने से देश में मौसम की भविष्यवाणी के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिली है। उपग्रह पर आधारित स्थानीय विशेष आपदा चेतावनी प्रणाली के तहत समुद्री तूफान से प्रभावित पूर्वी समुद्री तट पर आपदा चेतावनी प्राप्त करने वाले उपकरण लगाये गये हैं। इससे बाढ़ तथा समुद्री तूफान से जान-माल की जीवन रक्षा करने में महत्वपूर्ण सफलता मिली है। इनसैट का सर्वाधिक व्यापक प्रभाव दूरदर्शन एवं दूरसंचार के क्षेत्र में ही पड़ा है। क्षेत्रीय सेवाओं में तेजी से वृद्धि, चल भू-केन्द्रों तथा उपग्रह समाचार संग्रहण माध्यम से प्रयोग और राष्ट्रव्यापी रेडियो नेटवर्क से सुदूर क्षेत्रों को भी राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने में मदद मिली है। सी-बैंड और विस्तारित सी- बैंड ट्रांस्पोंडरों की सहायता से दूर-दराज के क्षेत्रों में एक चैनल वाले संचार संपर्क, क्षेत्रीय टी.वी. मॉनीटरिंग तथा मेट्रो टी.वी. चैनल को प्रभावी बनाया गया है। साथ ही, इससे दूरसंचार प्रणाली को भी पहले की अपेक्षा अधिक प्रभावी बनाने में मदद मिली है। एस- बैंड ट्रांसपोंडरों की मदद से दूरदर्शन के राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय प्रसारण रेडियो प्रसारण, मौसम की जानकारी, प्राकृतिक आपदाओं की भविष्यवाणियों तथा सूचना प्रौद्योगिकी में काफी मदद मिली है। एक अन्य बैंड के.यू. प्रकार का भी होता है। इसके द्वारा महानगरों में दूरसंचार व्यवस्था को और अधिक सक्षम बनाने में मदद मिली है।

भारतीय सुदूर संवेदी उपग्रह प्रणाली (IRS System):

भारत द्वारा सर्वाधिक संख्या में सुदूर संवेदी उपग्रह छोड़े गए हैं, जो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उपयोग किए जा रहे हैं। इसके अलावा आईआरएस के अंतरिक्ष यानों पर लगे अत्याधुनिक कैमरे विभिन्न स्पेक्ट्रल बैंडों में पृथ्वी के चित्र लेते रहते हैं। भविष्य में इसरो द्वारा ऐसे अंतरिक्ष यान छोड़े जाएंगे जिनसे बेहतर रिजोल्यूशन के दिन और रात दोनों समय के चित्र प्राप्त होंगे। आईआरएस प्रणाली के निम्नलिखित उपग्रह-आईआरएस-1सी, आईआरएस-1डी, आईआरएस-पी3, ओसीईएएन सेट-1, तकनीकी परीक्षण उपग्रह (टीईएस) तथा रिसोर्ससैट-1 तथा अभी हाल ही में छोड़ा गया कार्टोसैट-1 (जो स्टीरियो तस्वीरें लेने में सक्षम है), कार्टोसैट-2, आरआई सेट (राडार इमेजिंग सेटेलाइट) तथा ओसीयन सैट-2 वर्तमान में अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे हैं।

आईआरएस उपग्रहों द्वारा प्रेषित चित्रों का भारत में कृषि उपज क्षेत्र तथा उनसे प्राप्त पैदावार के लिए कई तरह से उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त इन चित्रों का उपयोग जल के श्रेष्ठतम उपयोग हेतु भूजल एवं सतह पर उपलब्ध जल के संचयन एवं तालाबों तथा सिंचाई कमान क्षेत्रों की निगरानी हेतु भी किया जाता है। वन सर्वेक्षण, बंजर भूमि पहचान तथा उसे पुनः उपज योग्य बनाने का कार्य भी इन चित्रों के माध्यम से किया जाता है। इसके अतिरिक्त आईआरएस चित्रों का उपयोग खनिजों के अन्वेषण एवं संभावित मत्स्य क्षेत्रों की भविष्यवाणी हेतु भी किया जाता है। आयोजन और प्रबंधन में प्रयोगों के संदर्भ में आईआरएस से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग शहरी आयोजन, बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों की पहचान और इसके प्रभाव को कम करने के उपाय सुझाने के लिए किया जा रहा है। इस अनुभव के आधार पर स्थायी विकास के लिए समन्वित मिशन की धारणा विकसित की गई है, जिसमें अंतरिक्षयान से प्राप्त चित्रों और आंकड़ों को परंपरागत स्रोतों से मिलने वाले सामाजिक-आर्थिक आंकड़ों के साथ समन्वित किया जाता है, ताकि स्थायी विकास प्राप्त किया जा सके।

अंतर्राष्ट्रीय सहयोग:

अपनी शुरुआत से ही इसरो का अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में अच्छा रिकॉर्ड है। इसने 26 देशों/अंतरिक्ष एजेंसियों के साथ समझौते के ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं। संयुक्त राष्ट्र प्रायोजित अंतरिक्ष विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी शिक्षा केंद्र (सीएसएसटीई-एपी) भारत में स्थापित किया गया है और इसने अब तक एशिया-प्रशांत के 400 से ज्यादा लोगों को प्रशिक्षित किया है। इसके अतिरिक्त भारत अपने अंतरिक्ष में अनुभव बांटने के कार्यक्रम के अंतर्गत विकासशील देशों के लोगों को अंतरिक्ष उपयोग के क्षेत्र में प्रशिक्षण प्रदान करता है।

इसरो ने अन्य अंतरिक्ष एजेंसियों के वैज्ञानिक नीतभार को भी प्रक्षेपित किया है। इसका नासा/एनओएए के साथ इनसैट उपग्रह से प्राप्त मौसम संबंधी आंकड़ों को हासिल करने का सहयोग समझौता है। **मेघा-ट्रॉपिक्स** वायुमंडल के अध्ययन के लिए इसरो और फ्रेंच अंतरिक्ष एजेंसी सीएनईएस के बीच संयुक्त उपग्रह मिशन है।

एन्ट्रिक्स (ANTRIX):

यह इसरो की व्यावसायिक इकाई है, जो कि भारत की अंतरिक्ष क्षमताओं के विपणन के लिए केंद्रीय एजेंसी का काम करती है। अमेरिका की स्पेस इमेजिंग के साथ यह आईआरएस आंकड़ों को विश्व भर में सुलभ कराने में अहम भूमिका अदा करती है। एन्ट्रिक्स आईआरएस से प्राप्त आंकड़ों के इस्तेमाल में उपयोगी उपकरण भी मुहैया कराती है। यह भारत के पीएसएलवी द्वारा प्रक्षपेण सेवाएं उपलब्ध कराता है। एन्ट्रिक्स द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले अंतरिक्ष यानों के हिस्से-पुर्जों के खरीददारों में दुनिया के जाने-माने अंतरिक्षयान निर्माता शामिल हैं। संचार बाजार के लिए 2000 कि.ग्रा. तथा 3000 कि.ग्रा. श्रेणी के उपग्रह प्लेटफार्मों के संयुक्त निर्माण के लिए ईएडीसी, एस्ट्रियम, पेरिस के साथ एक समझौता किया गया। इसके अतिरिक्त, एन्ट्रिक्स ने अति-स्पर्धी अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रेक्षण सेवाओं के लिए यूरोप तथा एशिया से अनुबंध हासिल किए।

अंतरिक्ष बाजार में भारत:

विश्व बाजार में प्रक्षेपण यान प्रौद्योगिकी एवं दूर संवेदी उपग्रह के क्षेत्र में भारत की विश्वसनीयता काफी बढ़ी है। इस क्षेत्र में जर्मनी, कोरिया एवं बेल्जियम जैसे देश हमारे उपभोक्ता बने हैं और भविष्य में अन्य कई देश भी उपभोक्ता बन सकते हैं, क्योंकि यहां प्रक्षेपण की लागत अन्य देशों की अपेक्षा काफी कम है। पी.एस.एल.वी. की सफलता के बाद भारत अपनी इस प्रक्षेपण यान तकनीक तथा अनुसंधान अनुभवों का सदुपयोग कर व्यावसायिक लाभ कमा सकने की स्थिति में आ गया है। अंतरिक्ष में भारतीय कारोबार की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को देखते हुए ही सितम्बर 1992 में अंतरिक्ष विभाग ने अपने अधीन **अंतरिक्ष कॉरपोरेशन लिमिटेड** नामक एक सरकारी कंपनी का गठन कर इसे अंतरिक्ष अनुसंधान आदि से संबंधित कारोबार का संपूर्ण दायित्व सौंप दिया था। अंतरिक्ष कॉरपोरेशन लिमिटेड अब अन्य विकासशील देशों को अंतरिक्ष अनुसंधान संबधी प्रौद्योगिकी, स्पेयर पार्ट्स, अन्य उत्पाद तथा शोध परिणामों पर परामर्श उपलब्ध करा सकने की स्थिति में है। यह अन्य उपग्रह निर्माताओं के साथ मिलकर दूसरे देशों के लिए कम लागत वाले उपग्रहों को बनाने की योजना पर भी कार्य कर रहा है।

क्रायोजेनिक्स (Cryogenics)

प्राय: शून्य डिग्री सेंटीग्रेड से 250 डिग्री के नीचे के तापमान (-250°C) को क्रायोजेनिक कहते हैं। इस निम्न ताप का उपयोग करने वाली प्रक्रियाओं तथा उपायों को क्रायोजेनिक इंजीनियरिंग के तहत अध्ययन किया जाता है। भू-स्थिर उपग्रह प्रक्षेपण यान (GSLV) में प्रयुक्त होने वाले द्रव चालित इंजन में प्रणोदक (Propellant) बहुत ही कम तापमान पर भरे होते हैं। इसलिए इस रॉकेट इंजन को क्रायोजेनिक इंजन कहते हैं। इस तरह के रॉकेट इंजन में अत्यधिक ठंडी द्रव गैसों (Liquified Gases) का ईंधन (Fuel) तथा ऑक्सीकारक (Oxidising Agent) के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसमें द्रवित हाइड्रोजन गैस शून्य से 253 डिग्री सेंटीग्रेड कम तापमान (–253°C) पर तथा द्रवित ऑक्सीजन गैस शून्य से 183 डिग्री सेंटीग्रेड कम तापमान (–183°C) पर अलग-अलग टंकियों में संग्रहित रहती है। इस इंजन में हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन क्रमश: ईंधन एवं ऑक्सीकारक का कार्य करती हैं।

क्रायोजेनिक इंजन में प्रणोदक के रूप में अतिशीतलित द्रव हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का इस्तेमाल इसलिए जरूरी है, क्योंकि ये अन्य ठोस या तरल ईंधनों की अपेक्षा कम वजनदार होते हुए भी उनसे 50% ज्यादा असरदार होती हैं। क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन में प्रणोदकों को अति निम्न ताप पर रखने के लिए बर्तनों को कुछ ऐसे उष्मा-रोधी पदार्थों (Heat Resistant Materials) से बनाया जाता है, ताकि वे इतना अधिक निम्न ताप सहने की स्थिति में आ सकें तथा इतने कम तापक्रम पर संपूर्ण क्रियाविधि भी सुचारु रूप से संपन्न हो सके। क्रायोजेनिक इंजन के निर्माण हेतु विशेष किस्म के इन्सुलेशन की व्यवस्था की जानी जरूरी होती है। यही कारण है कि क्रायोजेनिक इंजन कुछ विशेष प्रकार की मिश्रधातु (Alloy) की दोहरी दीवार वाला बना होता है। इंजन के निर्माण की इस खास प्रक्रिया को **इलेक्ट्रोफॉर्मिंग** (Electroforming) का नाम दिया गया है। क्रायोजेनिक इंजन के टरबाइन तथा पम्प, जो ईंधन तथा ऑक्सीकारक दोनों को दहन कक्ष (Combustion Chamber) में पहुंचाते हैं, भी खास किस्म के मिश्रधातु से बनाये जाते हैं।

क्रायोजेनिक इंजन के थ्रस्ट चैम्बर्स में तापक्रम काफी ऊंचा (करीब 2000°C) होता है। अत: सबसे पहला प्रयास अत्यंत विपरीत तापों पर इंजन में व्यवस्था बनाये रखने की क्षमता हासिल करना ही होता है। इंजन के ताप में शून्य से 250 डिग्री सेंटीग्रेड नीचे से लेकर 2000°C तक का उतार-चढाव होता है। अत: थ्रस्ट चैम्बरों, टरबाइनों, ईंधन तथा ऑक्सीकारक के टैंकों के लिए कुछ विशेष प्रकार की मिश्रधातु की जरूरत होती है। क्रायोजेनिक इंजन के लिए प्रति मिनट 43 हजार (आर.पी.एम.) लगाने तथा उच्च दाब एवं ताप के उतार-चढ़ाव झेलने वाले टर्बो पम्प की जरूरत होती है।

अंतरिक्ष प्रदूषण (Space Pollution):

आज के इस वैज्ञानिक युग में प्रदूषण की मार न सिर्फ पृथ्वी को झेलनी पड़ रही है, बल्कि हमारा अंतरिक्ष भी इससे अछूता नहीं रह सका है। अंतरिक्ष में प्रदूषण की समस्या मुख्यत: विकिरण तथा कचरे (Radiations & Garbage) से उत्पन्न होती है। यह विकिरण बाह्य अंतरिक्ष से ब्रह्मांडीय किरणों (Cosmic Rays) के रूप में आती है। इनमें उच्च क्षति वाले नाभिकीय कण तथा विद्युत-चुंबकीय विकिरण भी शामिल होते हैं। अंतरिक्ष किरणों को भेद कर ब्रह्मांडीय किरणें आसानी से निकल जाती हैं तथा अंतरिक्षयात्रियों की रक्त कोशिकाओं में गुणसूत्रों (Chromosomes) के टूटने का क्रम शुरू हो जाता है। अंतरिक्ष किरणों के प्रदूषणकारी प्रभावों से अंतरिक्षयात्रियों को कैंसर तथा अन्य घातक रोगों से ग्रसित होने की आशंका होती है। अंतरिक्षयात्रियों को अंतरिक्ष में पृथ्वी की तुलना में करीब डेढ सौ गुना अधिक विकिरण को झेलना पड़ता है।

घातक विकिरणों के अलावा अंतरिक्ष में कचरे से भी प्रदूषण उत्पन्न होता है। अंतरिक्ष में मानव द्वारा प्रक्षेपित कई तरह के पिंड (स्पेस प्रोब) उपग्रह, अंतरिक्ष स्टेशन आदि) घूमते रहते हैं। इन्हें प्रक्षेपित करने के लिए रॉकेटों का उपयोग किया जाता है। इन बहुखंडीय रॉकेटों का अंतिम खंड उपग्रह या अंतरिक्षयान को उसकी नियोजित कक्षा में स्थापित करने का काम करता है। रॉकेटों का यह अंतिम खंड अपने कार्य को अंजाम देने के बाद अंतरिक्ष में कचरे के रूप में परिणत हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार, अब तक करीब 10 हजार आकाशीय पिंड विभिन्न देशों एवं अंतरिक्ष एजेंसियों द्वारा अंतरिक्ष में छोड़े जा चुके हैं। सर्वाधिक समस्या उन छोटे खंडों अथवा टुकड़ों से उत्पन्न होती है जो आकार में काफी छोटे होते हैं, परंतु जो अंतरिक्षयानों एवं उपग्रहों से टकरा कर उनके लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। इस तरह के करीब 70 हजार से डेढ़ लाख तक के टुकड़े मलबे के रूप में अंतरिक्ष में जमा हैं।

कभी-कभी कोई उपग्रह अंतरिक्ष में घूमते हुए अचानक एक विस्फोट के साथ फट पड़ता है। ऐसी स्थिति में उपग्रह के ईंधन में मौजूद रसासन बाह्य अंतरिक्ष में बिखर कर वहां विद्यमान कुछ गैसों से क्रिया करके प्रदूषण फैलाते हैं। साथ ही, विस्फोट के कारण उड़ चुके उपग्रह के टुकड़े भी मलबे का काम करते हैं। इसी तरह मारक उपग्रह (Killer Satellites) भी मलबे को जन्म देते हैं।

अंतरिक्ष में अपने उद्देश्यों की पूर्ति हो जाने पर उपग्रह की गति में वायुमंडलीस कर्षण बल (Atmospheric Drag Force) के कारण उत्तरोत्तर कमी आती जाती है, जिसके कारण उपग्रह सर्पिलाकार पथ का अनुसरण करता हुआ पृथ्वी की ओर गिरने लगता है। जैसे-जैसे उपग्रह पृथ्वी की ओर गिरता चला जाता है, वैसे-वैसे वायुमंडलीय कर्षण बल भी बढ़ता जाता है। अंतत: इससे इतने अधिक परिमाण में ताप की उत्पत्ति होती है कि उपग्रह में आग पकड़ लेती है और वह राख के रूप में पृथ्वी पर गिर जाता है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि उपग्रह का कोई धात्विक हिस्सा कठोर होने के कारण नहीं जल पाता है। ऐसी स्थिति में उपग्रह के ये अधजले टुकड़े पृथ्वीवासियों के लिए हानिकारक साबित होते हैं।

अंतरिक्ष में कचरे के रूप में जमा होने वाले छोटे-छोटे टुकड़ों में अकल्पनीय गति मौजूद होती है, जिससे ये अंतरिक्षयात्रियों के लिए प्राणघातक भी साबित हो सकते हैं। तेज गति वाले ये टुकड़े अंतरिक्षयान को भी काफी नुकसान पहुंचा सकते हैं। ये टुकड़े अंतरिक्ष स्टेशनों तथा कक्षा में स्थापित किये जाने वाले उपग्रहों के लिए बहुत बड़े खतरे का कारण बनते हैं। नाभिकीय उर्जा का इस्तेमाल करने वाले उपग्रहों के कारण भी अंतरिक्ष में प्रदूषण फैल सकता है। किसी तकनीकी खराबी के चलते यदि ये नाभिकीय उपग्रह पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश कर जायें, तो इससे धरती पर भी नाभिकीय प्रदूषण के फैलने का अंदेशा पैदा हो सकता है।

अंतरिक्ष में कचरे की समस्या से उत्पन्न प्रदूषण तथा उससे उपग्रहों, अंतरिक्ष स्टेशनों आदि को पैदा हुए खतरों पर विचार-विमर्श करने के लिए यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी ने वर्ष 1977 में जर्मनी में एक सम्मेलन का आयोजन किया था। इस सम्मेलन में एक महत्वपूर्ण सुझाव यह उभर कर सामने आया कि ऐसी कोशिश होनी चाहिए, ताकि अंतरिक्ष में कचरे या मलबे का निर्माण ही नहीं होने पाये। लेकिन इसके लिए यह जरूरी है कि सम्बद्ध राष्ट्रों द्वारा गुणात्मक कदम उठाये जायें तथा पर्याप्त सावधानियां बरती जायें। अंतरिक्ष में मलबे के कणों तथा उल्का पिंडों (Comets) आदि के संघातक असर से अंतरिक्षयानों के बचाव हेतु उनके बाह्य ढांचे के चारों ओर धात्विक कवच (Metallic Protector) चढ़ाये जाने के बारे में भी वैज्ञानिक विचार कर रहें है। लेकिन ऐसा करने पर अंतरिक्ष मिशन पर जबर्दस्त आर्थिक बोझ पड़ने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता है। अंतरिक्षयानों में बचावकारी उपकरण लगाये जाने के बारे में भी वैज्ञानिकों ने अपने सुझाव रखें हैं, ताकि ये यान अंतरिक्ष में तैरते कणों को निरस्त कर उससे बच निकलने में काफी हद तक सक्षम हो सकें।